Indian Streams Research Journal
Vol -1 , ISSUE –2, March – 2011
ISSN:- 2230-7850
Available online at www.lbp.world

ORIGINAL ARTICLE

मोहन राकेश के नाटकों के नारी पात्र

डॉ.महेन्द्रसिंह अजितसिंह पवार

हिन्दी विभाग प्रमुख,श्री.वसंतराव नाईक महाविद्यालय, धारणी जि.अमरावती .

प्रस्तावना :

नारी जीवन को अभिव्यक्त करने वाले मोहन राकेश के ये तीनों नाटक, कहीं नारी को त्यागमयी, कहीं उपभोग्या, कही अहंकारी तो कहीं विद्रोहिणी गरिमा की मूर्ति चित्रीत करते है। इन तीनों नाटको के मुखौटों के पीछे जो असली नारी है। वह एक अस्तित्व की तलाश में भटकती नारी है। आज भारतीय नारी का जीवन केवल पृष्ठों पर ही स्वतंत्र है। सामाजीक जीवन में नही। वस्तुस्थिति यह है कि, आज की नारी अपने चतुर्दिक परिवेश से अंतर्राष्ट्रीय माहौल से अपने को जोडना चाहती है। परंतु संस्कारवादिता और परंपराए उसके मार्ग पर बाधक बन रही है। वह इनके बीच किसी मध्यममार्ग की खोज अथवा समझौता नही कर पा रही है। यह एक विडंबना पूर्ण स्थिति है। मध्यमवर्गीय परिवार का परिवेश इसमें सॉस लेती नारी की विभिन्न संवेदनाए मोहन राकेश के नाटक (आधे अधुरे) में पाई जातीहै। यहॉ नारी यथार्थ परिवेश में टूटती भी है, और फिर खडे होने का प्रयास भी करती है। कभी वह झुंझलाती है, बौखलाती है, कभी ईमानदारी के साथ अपने प्रश्नों और अभावों के साथ जूंझती है, और कभी समझौता भी कर लेती है।

आर्थिक रूप से परावलंबी होने के कारण नारी आज तक मानवीय अधिकारों से भी वंचित रही है। पुरूष प्रधान समाज में उसका निरंतर शोषण होता रहा। स्वतंत्रता के बाद इस स्थिति में यत्किंचित सुधार परिलक्षित होता है। संवैधानिक रूप से अब उसे शिक्षा और समता का अधिकार भी मिल गया है। संवैधानिक अधिकारों ने उसे सजगता और नई जीवन दृष्टी प्रदान की। अब वह अबला नही रही। स्वयं को सबला बनाकर प्रस्तुत करने के लिये वह प्रयत्नशील है। आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर हो नारी जीवन प्रगति और उन्नति के मार्ग में रूकना नही चाहती। स्वतंत्र व्यक्तित्व की अहं मिश्रित धुन में वह मुक्त रहकर कुछ ऐसा व्यवहार करना चाहती है कि जैसे उसे किसी पुरुष की इच्छा नही या आवश्यकता नही। यह कहना कठिन है कि अविवाहित नारी अधिक संत्रास झेलती है। या विवाहित नारी सत्य तो यह है कि चैन किसी को नही। विवाहित कार्यशील नारी बहुत दूर तक अपने संस्कारों से मुक्त नही हो पाती। घर में रहकर भी बेघर होने की अनुभूति उसे आतंरिक पीडा देती है। नारी जीवन की इन विभिन्न भाव भंगिमाओं में से कुछ भाव भंगिमाओं का सोदाहरण विवेचन अपने कथन की पुष्टि के लिये सहायक होगा।

आषाढ का एक दिन में प्रेम का त्रिकोण दिखाई देता है। नारी पुरुष के तीन भिन्न भिन्न रूप देखने को मिलते है कालिदास मल्लिका (प्रेमी मल्लिका) कालिदास प्रियंगुमंजरी (पति-पत्नी) विलोम मल्लिका (पति-पत्नी) इसमें कालिदास और मल्लिका के संबंध में उलझाव है, जटिलता है, और एक तलाश है संबंधो की।

मोहन राकेश के आषाढ का एक दिन में एक ऐसी प्रेमिका का चित्रण है जो एक कवि को प्रेम ही नही करती उसे महान होते हुए भी देखना चाहती है। इस नाटक में हम कालिदास को मल्लिका के समक्ष तुच्छ और स्वार्थी व्यक्ति के रूप में देखते है। कालिदास को महान बनाने में मल्लिका अपना सर्वस्व न्यौछावर कर देती है। प्रस्तुत नाटक में प्रेम भावना का व्यक्ति कर्म एवं कलाकार की भावना से संघर्ष दिखाया गया है। इस नाटक का प्रारंभ आषाढ के एक दिन से तथा समापन भी आषाढ के एक दिन से ही होता है। इन दो दिनों के अंतराल को कालिदास और मल्लिका की पीडा ने भरा है कालिदास में अहं की पिडा है। तो मल्लिका में रचनात्मक उत्सर्ग की।

स्पष्टत: आषाढ का एक दिन में प्रेम का त्रिकोण है एक नारी दो पुरुष मल्लिका जानती है कि विलोम कहॉ सबल हैं और कालिदास कहॉ निर्बल। अत: वह सर्वदा चेष्टा करती है कि दोनो का सामना न हो पाये। दोनो का सामना होने पर वह बेचैन हो जाती है। नियति की विडंबनावश अंतत: मल्लिका का शरीर विलोम को प्राप्त है। और ख्याति कालिदास की मल्लीका और कालिदास का विवाह न होने का कारण कालिदास का अभावग्रस्त जीवन है। परंतु अभाव की पूर्ति उससे भी बडा कारण बन जाती है। वास्तविक सत्य यह है कि कोई भी व्यक्ति जब सुविधा भोगी हो जाता है तो वह स्थिती को भोगने के लिये बाध्य हो जाता है। यह एक मनोवैज्ञानिक सत्य है कि अभाव पूर्व जीवन की एक स्वाभाविक प्रतिक्रिया है। राजसत्ता का प्रलोभन उसे अपने परिवेश से काटता है वह वैभवपूर्ण जीवन की

सीढियॉं चढता जाता है पर उसके पैर तले की जमीन पीछे टूटती जाती है। यह असुरक्षा का अभाव उसे उज्जयिनी से काश्मीर तक भटकाता है। वह जिनसे जुडा था उनसे कट जाता है और जो कभी उसके अस्तित्व के साथी नही थे उनके अस्तित्व से जुड जाता है फलत: वह पूर्णत: किसी से भी नही जुड पाता न तो अपनों से न परायों से।

मल्लिका का प्रेम भावना में भावना का वरण है। एक ओर मल्लीका भावना को ही सब कुछ मानती है तो दूसरी ओर कालिदास मल्लिका को अभावों की मॅझधार में छोडकर भावों की खोज में चला जाता है। मल्लिका के सामने ऐसी स्थिरती आती है कि जिसे वह अयाचित अतिथी कहती थी। उसकी पत्नी बनने पर अपने को वारांगना कहती है विलोम मल्लिका पति पत्नी होकर समायोजन में जीते है। मल्लिका विलोम से तन से जुडकर भी मन से नही जुड पाती।

"आषाढ का एक दिन" में कालिदास और मल्लिका के संबंध में जो उलझावव है जटिलता है कुछ उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट हुआ यदि गहनता से हम देखे तो प्रेम में एक ओर भावना है। जो मल्लिका के प्रेम को उदात्त स्वरूप प्रदान करती है। वह स्वयं अभाव झेलती है। मै टूटकर भी अनुभव करती रही कि तुम बने रहो क्यों कि मै अपने को अपने में न देखकर तुममें देखती रही। मल्लिका का यह निश्छल प्रेम उस कालिदास के प्रति है जो आत्मकेंद्रित है।

नायिका के रूप में मल्लिका किसी की प्रेयसी है, तो बाद में दूसरे (विलोम) की पत्नी बन जाती है। यह त्रिकोण कुछ प्रश्नो को उभारता है (१)क्या प्रेम के बिना विवाह संभव है। (२) क्या प्रेम एकांगी हो सकता है। (३) क्या विवाह के बिना प्रेम का निर्वाह सकता है? (४) क्या एक ही व्यक्ति तन और मन को विभाजित कर सकता है। (५) क्या तन किसी से और मन किसी से जोडकर अपने को सार्थक किया जा सकता है। आदि प्रश्न उभर कर आते है।

जिस कालिदास के लिये मल्लिका को वारांगना बनना पडा जिसकी रचनाओं को प्राप्त करने के लिये अनेक कष्ट उठाने पडे उसके हर अक्षर पर वह मुस्कराती हूँई आंसु बहाती रही। उसी कालिदास ने जब यह कहा हम फिर से अथ से आरंभ करेंगे तो पाठक और दर्शक को ऐसा लगता है कि दोनो का प्रेम साकार हो उठेगा। परंतु मल्लिका की पुत्री के रोने की आवाज सुनकर कालिदास को वास्तविकता का पता चलता है। तो वह चुपचाप वहॉं से निकल जाता है और मल्लिका उसे पुकारती ही रह जाती है।

नाटक की चरम सीमा पर पहूंचकर हम इस निष्कर्ष पर पहूंचते है कि कालिदास और मल्लिका दोनो की भावना और दृष्टीकोण में अंतर है। मल्लिका हार कर भी जीती है, और कालिदास हारा है। मल्लिका के कालिदास से अनन्य प्रेम किया और कुछ भी प्रतिदान नही चाहा। स्वाभिमान के क्षेत्र में भी वह कालिदास की अपेक्षा श्रेष्ठ है। मल्लिका के विषय में स्वयं नाटककार का कथन है। मल्लिका कालिदास की आस्था का विस्तारित रूप बन जाती है। मल्लिका का चरित्र प्रेयसी और प्रेरणा का ही नही भूमि में रोपित उस आस्था का भी है जो उपर से झुलस कर भी अपने मूल रूप में विरोपित नही होती। कालिदास मल्लिका की उपेक्षा तो करता है परंतु उसकी स्मृति की टीस उसके मन को सालते रही है। उसे प्रेरक स्नेह चाहिये था शायद इसी प्रकार स्नेह की खोज में राकेश नित्य नई नारी की खोज में जुटे रहे। क्योंकि मल्लिका के अभाव में काव्य का स्त्रोत सुख रहा ऐसा स्वयं कालिदास अनुभूत करता है।

आधुनिक संदर्भ में भी यह विडंबना है कि आज भी पुरूष विभिन्न नारियों से यौन संबंध स्थापित करने के बाद भी विवाह योग्य रहते है। वही नारी यदि परिस्थितीयों की भॅंवर में यदि फॅंस जाये तो उपर उठाने को आधुनिक पुरूष तैयार नही मल्लिका ऐसा ही आधुनिक नारी का ज्वलंत उदाहरण है। मल्लिलका का प्रवंचना सहते जाना आधुनिक समाज की कुंठाओं की ओर संकेत करता है। आज हमारे समाज में भी अनेक महिलाए मल्लिका की भांति दोहरा जीवन व्यतीत कर रही है। मल्लिलका ऐसे विसंगत संबंधों से उभरी है। जो एक अव्यक्त पीडा को सहन करने के लिये बाध्य है। लाभ प्रयत्न करने पर भी इस विडंबना से छुटकारा नही पाती। असल में संबंधों की विसंगति से उभरी एक अत्यंत किस्म की पीडा में छटपटाने के लिये बाध्य हो गई है।

लहरों के राजहंस : व्यक्ति स्वातांय की हिमायती सुंदरी :

लहरों के राजहंस मोहन राकेश का दुसरा नाटक है। संबंधो की विविधता यहॉं अधिक लिती है। अन्य मानवीय संबंधों के साथ स्त्री पुरूष संबंधों में तीन भिन्न रूप भी देखने को मिलते है। अलका श्यामांग सुंदरी नंद और यशोधरा गौतम इसमें से नंद और सुंदरी के संबंधों की उलझन और जटिलता विशेष उल्लेखनीय है। नंद और सुंदरी एक प्रकार से अलका श्यामांग और यशोधरा गौतम बुध्द के बीच की स्थिती में है।

लहरों के राजहंस की सुंदरी नाटक की नायिका है। जिसमें फ्रायड का इड और इगो वर्तमान है। नाटक में वह सर्वप्रथम वर्ग भरी हुई नारी की भांती कामोत्सव के संबंध में अलका से कहते हुए आती है। कि हॉं रात के अंतिम प्रहर तक भोज, अपानक और नृत्य? वर्षो तक याद बनी रहनी चाहिए लोगों के मन में सुंदरी अपने रूप और यक्षिणी नारी होने पर गर्व करती है। शारीरिक सुख भोग विलास के अलावा अन्य अभौतिक तत्वों को तुच्छ समझती है।

रूप गर्विता सुंदरी को सहज और अटूट विश्वास है कि उसका पति नंद उसके रूपपाश और प्रेम बंधन से मुक्त होकर कभी भिक्षु नही बन सकता। सुंदरी व्यक्ति विशेष न होकर जीवन के प्रति एक दृष्टीकोण का प्रतिनिधित्व करती है। उसे अपने रूपाकर्षण पर इतना गर्व है कि वह पुरूष को प्रवृत्ती मार्ग पर लाने के लिये नारी का अमोघ अस्त्र मानती है। अलका से दृढता से कहती है। नारी का आकर्षण पुरूष को पुरूष बनाता है तो उसका अपकर्षण उसे गौतम बुध्द बना देता है।

सुंदरी पुरूष के लिये एक मात्र प्रवृत्ती मार्ग तथा उसे नारी सौंदर्य के दिपक पर जलने वाला पतंगा मात्र मानती है। इसका प्रमाण यह है कि वह अपने अहंकार और दर्प में गौतम बुध्द की महानता भी स्वीकार नही कर पाती, और प्रवृत्ति एवं भोगवाद के समक्ष

उनकी निवृत्तीवाद का उपहास करती हूई कहती है। कोई गौतम बुध्द से कहे कि कमलताल के पास आकर इनसे (राजहंसों से) भी वे निर्वाण और अमरत्व की बात कहे। ये चोंच से चोंच मिलाकर चकित दृष्टी से उनकी और देखेंगे फिर कांपती लहरे जिधर से जायेंगी उधर तिर जायेंगे। सोचती हूँ उस दिन एक बार गौतम बुध्द का मन नदी तट पर जाकर उपदेश देने का नही होगा। एक मनोविश्लेषक की भांती सुंदरी यह समझती है कि सिध्दार्थ के मन में दमित काम ने उदात्तीकृत होकर उन्हे तथागत बना दिया है। देवी यशोधरा का आकर्षण यदि राजकुमार सिध्दार्थ को बांध सकता तो क्या आज भी राजकुमार सिध्दार्थ न होते।

सुंदरी का उक्त कथन उसकी गर्वोक्तियों का प्रतीक है।

दूसरे अंक में नंद सुंदरी के श्रृंगार में सहायता करता है। इसी समय भिक्षुओं की आवाज से नंद के हाथों में कंपन होता है। और दर्पण गिरकर टूट जाता है। तभी अलका व्दारा सुचना मिलती है कि गौतम बुध्द व्दार से लौट गये है। इससे सुंदरी का अंतरमय भयभीत हो जाना तब उसकी अंतरात्मा कांप उठती है परंतु नारी स्वभाव वश वह अपनी दुर्बलता प्रकट नही होने देती है। और बाहर से अपने को निर्भय और निर्द्वंव्द प्रकट करती है। उसका यह आचरण उसमें निहित प्रबल इच्छा शक्ती और सबल नारी व्यक्तीत्व का द्योतक है जाते जाते ही नंद को स्वीकार करना पडता है। कि मुझे वही करना है तो तुम चाहोगी और वैसे ही करना है जैसे तुम चाहोगी।

शुरू से अंत तक सुंदरी के चरित्र से यह दृष्टव्य है कि सुंदरी में अहंकार भावना प्रबल है। परंतु नंद जब सिर से बाल कटवा कर आता है, तो वह कहती है। लौट कर वे नहीं आये कोई दूसरा आया है। सुंदरी पुर्वाग्रह के कारण नंद को समझ नही पाती, उसकी बाते अनसुनी कर देतीहै। उसका अहं उसे निरंतर नंद से दूर करने में प्रेरक बन कर सामने खडा रहता है। सुंदरी जिस पूर्ण पुरूष की तलाश में थी। उसे प्राप्त करने में असमर्थ रहती है। इसी अंतर्द्वंव्द में पडी सुंदरी कह देती है कि तुम कितने बिंदू खोजे है आज तक तुमने जाओं? एक और बिंदु खोजो। कितने कितने शब्दों में हॉं ढॉंपा है इन बिंदूओं को जाओ और कुछ शब्द ढूंढो परंतु अंत में कहॉं रह जाते है सब बिंदू कहॉं चले जाते है तुम्हारे शब्द अपने सौंदर्य पर गर्व करने वाली सुंदर अंत तक अंतर्द्वंव्द करती हुई पराजित होती है। अपने अभिमान के खंडित होने पर सुंदरी एकंता चाहती है।

सुंदरी का इस प्रकार टूटना नारीत्व की एक आधरणी बन गया है। एक पत्नी बनने के बाद भी वह पत्नी नही बन पाई। यही उसके चारित्र की विडंबना है। सुंदरी का चरित्र लहरों के राजहंस का एक सशक्त चरित्र है। जिसमें अभिजात्यता की गंभ है। अपराजित व्यक्तित्व की धनी सुंदरी जिसके सामने नंद भी दुविधा ग्रस्त हो जाता है।

इस प्रकार संपूर्ण नाटक में सुंदरी का चरित्र अहं केंद्रित है और नंद दुविधाग्रस्त जो शुरू से अंत तक हॉं और ना के बीच हिलौरे खाता रहता है। अहंकारी व्यक्ति का प्रेम आत्मकेंद्रीत होकर अंतत: अहंकार का ही अंग बन जाता है, जैसा कि डॉ.नगेंद्र ने कहा है अहंकार का गुण है धनत्व और राग का गुण है तरलता धनत्व का निर्बंध विकास जडता की ओर ले जाता है वह मनुष्य को पत्थर बना सकता है। सुंदरी का अहंकार उसे जड बना देता है। सुंदरी का आहत अहं उसे अलगाव की स्थिती में ले जाता है। नंद सुंदरी के जीव का विघटन और उनके व्यक्तिगत त्रासदी का बहुत बडा उत्तरदायित्व सुंदरी पर ही है।

नाटककार ने दर्पण माध्यम लेकर दोनो के संबंधों को बडे सुंदर ढंग से चित्रित किया है क्योंकि एक स्थान पर नंद अपने को सुंदरी का दर्पण कहता है। इसका कारण यह है कि सुंदरी अपने रूप अहं आकांक्षाओं को उसमें ही साकार पाती है। वह पावे भी क्यों नही? क्योंकि वह उसके अहं को आराम देता है। तुष्ट करता है और जिस प्रकार दर्पणका अपना पृथक अस्तित्व नही है। वैसे ही नंद का टूटना उस संबंध का टूटना बन जाता है। जो दोनो के बीच कभी विद्मान था।

सुंदरी के चरित्रांकन और नंद का व्दिविधाग्रस्त मन मोहन राकेश के नाटक की त्रासदी है। जयदेव तनेजा लिखते है नंद सुंदरी के दांपत्य जीवन के विघटन और उनकी व्यक्तिगत त्रासदी का बहुत बडा उत्तरदायित्व सुंदरीपर है। डॉ.रीता कुमार के मत में यह नाटक सुंरी और नंद की गलतफहमी में समाप्त हो जाता है। परंतु जयदेव तनेजा को गलत फहमी वाली बात स्वीकार नही है। परंतु मेरे विचार में तो सुंदरी को अपने रूप पर घमंड है। परंतु अभिमान भी एक सीमा पर जाकर चूर चूर हो जाता है। क्योंकी उसका पुरूष नंद तो पुरूष था क्योंकि उसमें नारी का आकर्षण था परंतु वही नारी के जीवन की विडंबना कितनी दर्द भरी है। कि जिन हाथों से सुंदरी का श्रृंगार पूर्ण होना था। उनमें वह व्यक्ति दीक्षा लेकर आया।

त्रासदी के कारणों पर प्रकाश डालते हुए डॉ.गोविंद चातक लिखते है कि नारी जितना ही अधिक प्रेम पाती है उतना ही वह अपने अस्तित्व से वंचित होती है। और उतनी ही असुरक्षा और दयनीयता उसके हाथ आती है। पुरूष जितना ही लिप्त होता है उतनी ही दासता को भोगता है। और उतनी ही तीव्र उसका विकर्षण भी होता है। स्त्री पुरूष दोनो के लिये इसी लिये प्रेम विघटनकारी होने के लिये नियतिबध्द है। नंद और सुंदरी पर यह कथन शत प्रतिशत घटित होता है।

केश कटे नंद की भांती आज का व्यक्ति नंगा होकर जीवन के चौराहे पर खडा है। सुंदरी जब नंद को नकार देती है तो नंद विश्वसनीयता को खोकर मनुष्यता को ही खोया हुआ अविश्वसनीय व्यक्ति बन जाता है। अंतर्व्दन्व्द और संघर्ष की यह भावना बतलाती है कि आज का व्यक्ति भी भौतिकतम और आध्यात्मिकता के अनिवार्य व्दन्व्द में टूट रहा है। और स्वयं को बेसहारा महसूस करता है। अत: इस नाटक में नंद और सुंदरी के व्यक्तित्व की बेचैनी विवशता, आंतरिक संघर्ष और यातना के माध्यम से आज के नारी पुरूष की नियति को रेखांकित किया गया है।

संदर्भ सुची -

- आधुनिक नाटक का मसिहा- मोहन राकेश डॉ.गोविंद चातक
- आषाढ का एक दिन - मोहन राकेश
- नाटककार : मोहन राकेश : - सुंदरलाल कथुरिया,
- आधुनिक नाटक का मसिहा - मोहन राकेश - डॉ.गोविंद चातक